Chapter-2

द्वितीय अध्याय

सियारामशरण गुप्त की काव्यकृतियों का संक्षिप्त परिचय

प्रस्तावना

[अ] मौलिक कृतियाँ

[आ]अनूदित कृतियाँ

उपसंहार ।

प्रस्तावना :

हिन्दी साहित्य का आधुनिक काल अपने अंतराल में अनेक विशेषताओं को समेटे हुए साहित्य के इतिहास में अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाए हुए है। जागरणकाल से लेकर व्दिवेदीकाल तक साहित्य की धारा विभिन्न मोडों से गुजरते हुए उत्तरोत्तर प्रगति के पथ पर अग्रसर होती रही है। युग परिवर्तन के नये प्रकाश में मौलिक उद्भावनाओं के साथ साथ पश्चिमी साहित्य का प्रभाव भी प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप में हिन्दी साहित्य पर पड़ता हुआ दृष्टिगत होता है। हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल में व्दिवेदी युग का अपना एक विशिष्ट स्थान है और स्व. श्री. सियारामशरण गुप्त भी व्दिवेदी युग के एक विशिष्ट कवि थे। सियारामशरणजी ने अपनी प्रतिभा एवं मौलिकता के आधार पर विभिन्न शैलियों का निर्माण किया था। उत्कृष्ट कवि होने के साथ साथ सफल उपन्यासकार, नाटककार, कहानीकार, निबंधकार तथा अनुवादकार के रूप में भी उनकी पर्याप्त ख्याति है।

गुप्तजी ने साहित्य के विविध रूपों को व्यक्त करनेवाली सत्ताईस कृतियों का निर्माण किया है, जिनमें से सोलह उनकी काव्य कृतियाँ हैं। इसके अतिरिक्त 'गोद,' 'नारी' एवं 'अंतिम आकांक्षा' उनके व्दारा लिखित उपन्यास हैं तथा 'मानुषी' में गुप्तजी व्दारा लिखित कहानियाँ संग्रहित की गई हैं। 'पुण्यपर्व' नाटक है तथा उन्होंने दो गीतिनाट्य भी लिखे हैं, जिनके नाम क्रमशः 'उन्मुक्त' एवं 'गोपिका' है। 'झूठ-सच' में गुप्तजी के निबंधों का संकलन हुआ है। 'बुध्दवचन' 'गीता संवाद' एवं 'हमारी प्रार्थना' आदि उनकी अनूदित कृतियाँ है।

यह उल्लेखनीय है कि साहित्य के विविध रूपों पर अपनी लेखनी चलाते हुए भी गुप्तजी की रुचि काव्य सृजन की ओर विशेष रही है। उनकी ख्याति कवि रूप में ही अधिक रही है। स्वयं उन्होंने भी कविता के प्रति अपनी रुचि प्रदर्शित करते हुए एक प्रसंग के संदर्भ में कहा था - "मुझे कविता ही सर्वाधिक तृप्ति देती है।....कविता के अतिरिक्त मैंने जो और कुछ लिखा है, उसे आप औद्योगिक भाषा में मेरे कार्य का उपजात [बाई प्रोडक्ट] कह सकते हैं। वह यदि कहीं अच्छा बन पड़ा है तो वहीं, जहाँ मेरी कविता किसी न किसी बहाने आकर मुझे थपथपा गयी है।"[१]

अब हम सियारामशरण गुप्त की काव्य कृतियों का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत कर रहे हैं।

[अ] <u>मौलिक कृतियाँ</u> :

<u>मौर्य-विजय</u> : [सन १९१४]

'मौर्य-विजय' गुप्तजी की अतीत के प्रति अटूट आस्था एवं प्रेम को अभिव्यक्त करनेवाली प्रथम काव्यकृति है। यह केवल बत्तीस पृष्ठों का लघुकाय खण्डकाव्य है जो तीन सर्गों में विभक्त है। प्रारंभ में ईशवंदना की गयी है, जिससे कवि की वैष्णव भावना का परिचय मिलता है। प्रथम सर्ग

----

१. सियारामशरण गुप्त की काव्यसाधना : डॉ. दुर्गाशंकर मिश्र : पृ. ३८ से उद्धृत

में कवि ने सम्राट चंद्रगुप्त को आर्य जाति के गौरवशाली सम्राट के रूप में चित्रित किया है। भारतीयों की वीरता और शौर्य के चित्रण के लिये पृष्ठभूमि के रूप में सिल्यूकस की प्रसिध्दि और शौर्य का चित्रण कवि ने किया है। चूंकि युध्द की पृष्ठभूमि में शौर्य वर्णन ही कवि का प्रधान उद्देश्य रहा है, अतः कवि की भाषा ओजपूर्ण दिखाई पड़ती है। हालाँकि छप्पय छंद के प्रयोग के कारण वह तनिक दबी हुई परिलक्षित होती है। भारत के प्रशस्ति गान को प्रभावोत्पादक बनाने के लिये कवि ने यूनानियों का भारत के धन वैभव और प्राकृतिक सौंदर्य से प्रभावित होने का संकेत भी दिया है –

"ये दृश्य देखकर ग्रीक सब
आमोदित हैं हो रहे,
निज मातृभूमि–सौंदर्य का
गर्व सभी हैं खो रहे।"[1]

कवि ने जनता की नैतिक भावना तथा भारत के सांस्कृतिक गौरव, विद्या एवं बुध्दिबल का भी सुंदर वर्णन किया है। व्दितीय सर्ग में सिल्यूकस की सेना के साथ चंद्रगुप्त मौर्य की सेना के भीषण युध्द का वर्णन है तथा चंद्रगुप्त मौर्य की विजय का चित्र अंकित है। तृतीय सर्ग में सिल्यूकस की कन्या एथेना का सौंदर्य वर्णन है तथा चंद्रगुप्त मौर्य के उसकी ओर आकर्षित होने की कथा लिखी गयी है। अंत में चंद्रगुप्त मौर्य और एथेना के परिणयोत्सव तथा उनका कान्धार एवं हिरातादिक प्रदेश पर विजय पाने का उल्लेख है। यहाँ कंधार हिरातादिक स्थानों की चर्चा व्दारा कवि ने तत्कालीन राज्यविस्तार की ओर संकेत किया है तथा चंद्रगुप्त और एथेना के परिणयोत्सव का प्रसंग दिखाकर हमारा ध्यान दो संस्कृतियों के समन्वय की ओर आकृष्ट करने का प्रयत्न किया है। काव्य सौंदर्य की दृष्टि से भी यह काव्य प्रशंसनीय है।

~~१. सियारामशरण गुप्त की काव्य साधना : डॉ. दुर्गाशंकर मिश्र : पृ. २८ से उद्धृत~~

१. मौर्य विजय : पृ. २७

संक्षेप में कहा जा सकता है कि "मौर्य-विजय राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत सुंदर कथात्मक, शैली में लिखे गये काव्य की दृष्टि से कवि की अमरकृति है।"[1]

<u>अनाथ</u> : [सन् १९१७]

'मौर्य-विजय' के समान 'अनाथ' भी मूलतः आख्यान काव्य है, किंतु 'मौर्य-विजय' में जहाँ राष्ट्रीय भावना को अभिव्यक्ति मिली है, वहीं 'अनाथ' में तत्कालीन विगलित सामाजिक जीवन का चित्रण हुआ है।

'मौर्य-विजय' के समान 'अनाथ' भी एक लघुकाय खण्डकाव्य है। इसमें समाज व्दारा पीड़ित एवं शोषित निर्धन मोहन की करूण कथा अंकित है। उसका ज्येष्ठपुत्र मुरलीधर रोगशैय्या पर है तथा छोटा बेटा भूख से बिलबिला रहा है। मोहन अत्यंत असहाय है वह किसके व्दारे भीख माँगने जाय ? अंत में वह अपना एकमात्र लोटा गिरवी रखकर चून लेकर लौट आता है कि बीच में चौकीदार उसे बेगार में पकड़ लेता है। थाने में उधर वह पकड़ा हुआ है, इधर घर में मरणासन्न पुत्र और वेदना विकल पत्नी से ऋण माँगने काबुली पठान आ धमकता है और पत्नी को बेगार में पकड़कर ले जाता है। मोहन थाने से छुटकारा पाता है तो मालगुजार के सिपाही के फँदे में आ फंसता है। वह सिपाही उसे उस स्थान पर ले जाता है जहाँ राग रंग हो रहा था। वहीं उसे पुत्र की मृत्यु का दुखद समाचार सुनने को मिलता है, वह शीघ्र गति से घर लौटता है, किंतु पत्नी को वहाँ न पाकर उसे गहरा धक्का लगता है। अंत में वह भी मृत्यु की शरण में चला जाता है। इस प्रकार एक ऋणभारग्रस्त कृषक की यह करूण कथा है जो रह रह कर कानों में कहती रहती है -

"पशु-तुल्य हम लाखों मनुज हा! जी रहे क्यों लोक में,
जीते हुए भी मर रहे पड़कर विषम दुःख शोक में।"[2]

---

१. सियारामशरण गुप्त : सं. डॉ. नगेन्द्र : 'सियारामशरण के ग्रंथ' लेख से पृ. ३६
२. अनाथ : पृ. २९

इस प्रकार 'अनाथ' काव्यका कथानक समाज के सामान्य जनजीवन से ही संबध्द है तथा "उसमें ग्रामीण जीवन का एक करुण चित्र अंकित कर जमींदारी प्रथा, बेगारी, शोषण एवं पुलिस के हृदयहीन अत्याचारों की कथा कही गयी है।"[१]

दूर्वा-दल [सन् १९२४]

'दूर्वा-दल' में सन् १९१५ से लेकर सन् १९२४ तक की रचनाएँ संकलित हैं। प्रस्तुत संग्रह में कुल मिलाकर पैंतीस रचनाएँ संकलित की गई है। यद्यपि संपूर्ण रचना में सांस्कृतिक और राष्ट्रीय जागरण की ध्वनि विद्यमान है, फिर भी कुछ कविताएँ ऐसी है, जिनका संबंध कवि के व्यक्तिगत जीवन से है। "वस्तुत: 'दूर्वा-दल' विभिन्न विषयक उन कविताओं का संकलन है जो सियारामशरणजी ने समय समय पर अपने तथा देश के जीवन से प्रभावित होकर लिखी थीं।"[२] "प्रस्तुत काव्य संकलन की आरंभिक कविता में धरती का चित्र अंकित है और कवि का कहना है कि उष्मा में निमग्न धरतीपर जब दया के बादल बरसते हैं तब वह कृतज्ञता भाव से पूर्ण हो जाती है। इस कविता का अंकन इस रूप में हुआ है जिससे दूर्वा-दल शीर्षक की स्पष्ट व्याख्या हो जाय।"[३] जिस प्रकार धरतीके पास केवल दूर्वा-दल है, जिन्हें वह अर्पित कर सकती है, उसी प्रकार कवि के पास जो भाव संपत्ति है, उसे ही वह समर्पित करता है। इस प्रकार यह कविता प्रतीकात्मक है। प्रस्तुत काव्य संग्रह की कतिपय रचनाओं में कवि की संस्कारी वैष्णव भावना का भी प्रबल उद्घोष मिलता है। 'विनय', 'शरणागत', 'गूढाशय', 'कब', 'विश्वास', 'माली के प्रति', 'प्रियतम', एवं 'पथ' आदि कविताओं में भक्तिभाव ही प्रबल रूप से है। इनमें से 'विनय' और 'शरणागत' में कवि अनेक रूपों में ईश्वर का संस्मरण करता है। 'गूढाशय' में कवि प्रकृति के विस्तृत व्यापार में ईश्वर की अनुभूति करता है और 'कब' शीर्षक कविता में श्रध्दाका

---

१. सियारामशरण गुप्त : सं. डॉ. नगेन्द्र : ले. विद्याभूषण अग्रवाल : पृ. ३६
२. वही -"- -"- : पृ. ३७
३. सियारामशरण गुप्त की काव्यसाधना : डॉ. दुर्गाशंकर मिश्र : पृ. ४८

भाव ही मुखरित हुआ है। 'माली के प्रति' कविता में परमपिता परमेश्वर को माली और मनुष्य को वृक्ष के रूप में अंकित कर कवि ने रहस्यभावना का परिचय दिया है। 'पथ' इस काव्य की श्रेष्ठ रचनाओं में से एक है। इस कविता में कविने परब्रह्म के विराट् स्वरूप को अगम अथाह पथ के प्रतीक रूप में प्रकट किया है तथा जगत के रहस्य के प्रति जिज्ञासा भाव व्यक्त किया है। 'जननी' में माता की करुणामयी महिमा का गुणगान किया गया है और "तुलसीदास में छायावादी प्रवृत्ति का कुछ आभास मिलता है।"[१] 'घट' में रूपक योजना व्दारा यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि जीवन घट के समान है और जो इस जीवन में जितनी गहराई से पैठकर 'ज्ञान' के मोती ढूंढेगा उसे उतनी ही प्राप्ति होगी। 'मूर्ति' कविता में सियारामशरणजी का मानवतावादी स्वर मुखरित हुआ है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि "'दूर्वा-दल' में सियारामशरणजी की दृष्टि अनेक नवीन विषयों पर गई है और इन कविताओं में न केवल कवि की विचारणा का परिचय मिलता है अपितु कवि का विन्यास भी नूतनता को लिये है।"[२] काव्य सौष्ठव की दृष्टि से ये कविताएँ हिन्दी साहित्य में अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाए हुए हैं।

<u>विषाद</u> : [सन् १९२५]

'विषाद' में सियारामशरणजी व्दारा रचित पंद्रह विषादमयी कविताएँ संकलित हैं, जिसकी प्रेरणा कवि को अपनी धर्मपत्नी के असामयिक निधन से प्राप्त हुई थी। इन कविताओं के शीर्षक पृथक्-पृथक् हैं और रचना का नाम 'विषाद' भावात्मक है। काव्य की प्रधान अनुभूति वेदनाजन्य ही है। प्रारंभ की "'दूरागतगान' कविता से कवि की वेदना को ही अभिव्यक्ति मिली है। 'दूरागत गान' से कवि का तात्पर्य पत्नी की स्मृति से है। कवि अपनी मर्माहत अवस्था में सुधार करना चाहता है। संयम, धैर्य, साहस तथा अन्य कार्यों में संलग्न रहकर अपनी व्यथा को भुलाना चाहता है, किंतु वेदना

---

१. सियारामशरण गुप्त की काव्यसाधना : डॉ. दुर्गाशंकर मिश्र - पृ. ५०
२. सियारामशरण गुप्त की काव्यसाधना : डॉ. दुर्गाशंकर मिश्र - पृ. ५१

का वेग इतना प्रबल है कि उसके समक्ष सभी प्रयास व्यर्थ हो जाते हैं।"[1] कवि अपने प्रिय की स्मृति से मौनालाप करने को उत्सुक है, इसीलिये 'विषाद' में संकलित 'स्मृति', 'पत्र', 'वही तिथि', 'अभिसार', 'किरण' और 'विदा' आदि कविताओं में कवि ने विगत दाम्पत्य जीवन के उन प्रेम प्रसंगों का आकलन किया है, जो उसे भावविव्हल कर देते हैं। दाम्पत्य प्रेम प्रसंगों की चर्चा करते हुए कवि ने सौंदर्य वर्णनभी किया है। विषय वस्तु की दृष्टि से यह कृति प्रसादजी के 'आँसू' से बहुत कुछ साम्य रखती है। 'विषाद' में कवि ने पुरुष और स्त्री के पवित्र प्रेम की दृश्यावली प्रस्तुत की है। चूंकि कवि ने व्यक्तिगत अनुभूतियों को व्यापक धरातल पर चित्रित किया है अतः ये अनुभूतियाँ मानव हृदय की सहज अनुभूतियों के रूप में अभिव्यक्त हो सकी हैं।

<u>आर्द्रा</u> : [सन् १९२७]

'आर्द्रा' में 'हूक', 'प्रणयोन्मुखी', 'डाकू', 'नृशंस', 'एक फूल की चाह' 'अग्नि-परीक्षा', 'चोर', 'डाक्टर', 'अबोध', 'वंचित', 'खादी की चादर', 'अब न करूँगी ऐसा', तथा 'बंदी' शीर्षक को मिलाकर तेरह कविताएँ संकलित हैं। इन समस्त रचनाओं की सृष्टि सन् १९२५ से लेकर सन् १९२७ के बीच कवि ने की हैं। "प्रस्तुत काव्यकृति का नामकरण संभवतः उस 'आर्द्रा' से संबंधित है जो 'खादी की चादर' नामक रचना में अबला-अभागिन नारी के रूप में चित्रित है।"[2] 'आर्द्रा' में हिन्दू समाज और राष्ट्र के करुणार्द्र चित्रों की ही प्रधान रूप से अभिव्यक्ति हुई है।

'हूक' कविता में बालिका रमा की हृदय गति रुक जाने के कारण होनेवाली मृत्यु का वर्णन है और मानव की अतृप्त आकांक्षा का भी मार्मिक चित्रण हुआ है। एक सहज घरेलू वातावरण से इस कविता का आरंभ होता है। बालिका रमा अपने पिता के साथ जाना चाहती है, किंतु पिता उसे साथ नहीं लाते, दुर्भाग्यवश बालिका की मृत्यु हो जाती है। बालिका की असामयिक मृत्यु से कवि का मन उव्दिग्न हो जाता है। उन्हें इस बात का पश्चाताप

---

१. सियारामशरण गुप्त की काव्यसाधना : डॉ. दुर्गाशंकर मिश्र - पृ. ५१
२. सियारामशरण गुप्त : सृजन और मूल्यांकन : डॉ. ललित शुक्ल - पृ. २६

होता है कि यदि वे कन्या को अपने साथ ले आते तो संभवत: उसकी मृत्यु का यह करुण दृश्य न देखना पड़ता। इस प्रकार 'हूक' कविता कवि की वेदनाजन्य अनुभूतियों को ही अभिव्यक्त करती है। 'एक फूल की चाह' में अस्पृश्य जाति के प्रति सवर्णों द्वारा किये जाने वाले अत्याचारों का सजीव वर्णन कवि ने किया है, जो हमारे हृदय को करुणा विगलित करने में सक्षम है। देवी के प्रसाद की इच्छुक बालिका राख बन जाती है, किंतु उसका पिता मंदिर से प्रसाद पुष्प नहीं ला पाता। 'प्रणयोन्मुखी' कविता संभवत: पत्नी की ओर से अंतिम वक्तव्य के रूप में लिखी गई है। 'डाक्टर' कविता में एक डूबती हुई युवती का वर्णन है। 'अग्निपरीक्षा' में हिन्दू मुस्लिम दंगों की भूमिका पर सुभद्रा नाम की हिन्दू नारी के सतीत्व के ओजमय दर्शन होते हैं, जिसने सीता की भाँति सलिल परीक्षा देकर अपने प्राण त्याग दिये। 'नृशंस' कविता सामाजिक समस्या से संबंधद है। कविता छोटे छोटे शीर्षकों में विभक्त है, जिसका संबंध बाप, बेटी और माँ से है। पिता चिंतामग्न है कि बेटी के विवाह के लिये दहेज कैसे जुटाया जाय ? माँ भी बेटी की बढ़ती हुई उम्र को देखकर चिंताकुल है। बेटी को माता-पिता की इस चिंता का आभास मिल जाता है और वह अपने मातापिता को इस चिंता से मुक्त करने के लिये स्वयं विषपान करके अपने जीवन को समाप्त कर लेती है। माता पिता को अब तक सामाजिक बुराई [दहेज] की चिंता व्याकुल किये थी, किंतु अब बेटी की मृत्यु उन्हें शोक विव्हल किये है। यहाँ कवि ने सामाजिक कुरीति पर कुठाराघात किया है और समाज को नृशंस कंस की संज्ञा दी है:

"घातक-समाज-कंस,
सौंप दूँ स्वयं मैं तुझे कन्या यह रे नृशंस ?
आप ही इसे मैं मार डालूँगा।"[1]

कवि ने कथात्मक शैली में भारतीय समाज और भारतीय राष्ट्र के अनेक चित्र इसमें अंकित किये हैं। निश्चित ही हिन्दी काव्य साहित्य में इस कृति का विशिष्ट स्थान है।

---

१. आर्द्रा : नृशंस - पृ. ४५

<u>आत्मोत्सर्ग</u> : [सन् १९३१]

'आर्द्रा' के प्रकाशन के चार वर्ष पश्चात् सन् १९३१ में प्रस्तुत काव्यकृति प्रकाशित हुई। 'आत्मोत्सर्ग' एक लघुकाय खण्डकाव्य है जो तीन खण्डों में विभक्त है। यह काव्य अमर शहीद श्री. गणेशशंकर विद्यार्थी के बलिदान के अवसर पर लिखा गया था। चूंकि कवि के निकट विद्यार्थीजी का बहुत मूल्य था, अत: उनकी अप्रत्याशित मृत्यु ने कवि के मन को झकझोर दिया, दूसरे राष्ट्रीय स्तर पर भी यह घटना जनता की राष्ट्रीय भावना को झकझोर देनेवाली थी। "कवि की लेखनी कानपुर के साम्प्रदायिक दंगों के कारण क्षत-विक्षत मानवता के दर्शन कर चीत्कार कर उठी।"[१] अत: कवि ने कानपुर के साम्प्रदायिक झगड़ों की पृष्ठभूमि में विद्यार्थीजी के बलिदान की करुण कथा अंकित की है। वस्तुत: विद्यार्थीजी का आत्मोत्सर्ग ही इस काव्य की मूलभूत प्रेरणा है।

काव्य के आरंभ में पूज्य बापू के विचार हैं और श्रध्दांजलि के रूप में स्व. मैथिलीशरण गुप्त की एक कविता प्रस्तुत की गई है। साम्प्रदायिक झगड़ों के कारण विषाक्त वातावरण का अंकन कवि ने बहुत ही सुंदर ढंग से किया है। इसमें विद्यार्थीजी के साहस और आत्मबलिदान का ओजमय चित्र अंकित हुआ है। विद्यार्थीजी उत्तेजित भीड़ को संबोधित करते हुए कहते हैं -

"हाजिर मेरा खून, तुम्हारा
फूले-फले अगर इस्लाम।"[२]

अंत में इस कामना के साथ कवि काव्य की परिसमाप्ति करता है -

"निखिल विश्व में परिव्याप्त हो,
मति वह सर्वहिता तेरी,
घर घर ज्ञान प्रदीप जला दे
मरणोद्दीप्त चिता तेरी।"[३]

---

१. सियारामशरण गुप्त : सं. डॉ. नगेन्द्र - पृ. ६१-६२
२. आत्मोत्सर्ग - पृ. ६०
३. आत्मोत्सर्ग - पृ. ७२

पाथेय [सन १९३४] :

'पाथेय' का प्रकाशन सन् १९३४ में हुआ। इसमें कवि की सन् १९२८ से लेकर सन् १९३३ तक की रची गई चौंवालीस कविताओं का संकलन किया गया है। इनमें से प्रथम कविता कवि ने अपने अग्रज को संबोधित करके लिखी है जिसमें उनके उदार व्यक्तित्व की चर्चा ही प्रधान रूप से की गई है। इस संग्रह की अन्य कविताएँ जैसे - 'असफल,' 'कसक,' 'शुभागमन,' 'अनुकूल,' 'अमर,' 'आकांक्षा' एवं 'शंखनाद' आदि कवि की विभिन्न मनोदशाओं की परिचायक हैं। कुछ कविताएँ राष्ट्रीय भाव धारा से भी संबंधित है। 'शुभागमन' में गांधीजी का महत्व अंकित किया गया है। 'असफल' कविता में कवि ने जन चेतना में आत्मविश्वास को जागृत करने का प्रयास किया है।

मृण्मयी : [सन् १९३६]

'मृण्मयी' कवि की स्फुट कथात्मक कविताओं का संकलन है। काव्य के प्रारंभ में 'सावन तीज के प्रति' शीर्षक कविता है जो कवि के अग्रज श्री. मैथिलीशरणजी के जन्म दिवस से सम्बध्द है। 'रजकण' कविता में आत्मा-परमात्मा के प्रति आत्मनिवेदन प्रकट किया गया है। कवि ने ईश्वर की विराट् सत्ता की अनुभूति को प्रकृति के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। 'लाभालाभ' कविता में एक साधारणसी कथा के माध्यम से कवि ने इस असार संसार और उसमें परिव्याप्त असंतोष का चित्रण किया है। 'मंजुघोष' में भी नीति की व्यंजना हुई है। इस कविता के माध्यम से कवि ने इस तथ्य को स्पष्ट करने की चेष्टा की है कि किसी वस्तुका महत्व न तो उसके अभाव में है और न ही उसकी प्राप्ति में। 'नाम की प्यास' कविता में कवि ने यह स्पष्ट करना चाहा है कि मनुष्य किस प्रकार यशलिप्सा से प्रेरित होकर कार्य करता है और उसका मूल लक्ष्य संसार का कल्याण करना नहीं होता। इस कविता का मुख्य उद्देश्य यशभावना से प्रेरित कार्य की निस्सारता प्रदर्शित करना है। 'छल' कवितामें बालक्रीड़ा की पृष्ठभूमि पर सागर और मानवके भ्रम अथवा आत्म प्रवंचना के सुंदर चित्र कवि ने प्रस्तुत किये हैं। 'ग्वालिनें' में कवि का वैष्णव भाव सौंदर्य के साथ मुखरित हुआ है। साथ ही कवि ने सच्ची भक्ति की ओर संकेत करते हुए प्रेम की महत्ता

एवं उसके उदात्त स्वरूप का भी प्रतिपादन किया है। 'सम्मिलित' में कवि ने माता वसुधा एवं प्रकृति को वरद् रूप में चित्रित किया है। 'अमृत' कवितामें कवि ने पौराणिक अमृत मंथन को वर्णित करते हुए सुख-दुख, अमरता एवं जीवन आदि अनेक प्रसंगों पर अपने विचार प्रकट किये हैं। 'पुनरपि' में प्रकृति के व्दारा कवि ने इस तथ्य को उद्घाटित किया है कि मनुष्य महत्वाकांक्षा के चक्र में फंसकर अपनी इच्छापूर्ति के निमित्त अनेक प्रकार के छल छद्म करता है। 'भोला' कविता का आधार एक सामाजिक कथा है, जिसमें कवि ने इस बात की ओर संकेत किया है कि गरीबों के लिये खर्च किया जानेवाला अल्प धन भी महत्वपूर्ण होता है। इस कविता में कवि ने साधारण जनमानस की आशा-आकांक्षा का चित्रण करने के साथ साथ बुंदेलखण्ड के आखेट की वनस्थली और आखेट प्रणालीकी झाँकी प्रस्तुत की है। 'खिलौना' में कवि ने दो बालकों की मनोभावनाओं के चित्रणव्दारा यह स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है कि मनुष्य स्वभाव से ही असंतोषी है। उसके पास जो कुछ होता है उससे वह कभी संतुष्ट नहीं हो पाता। 'खिलौना' में असंतोष इस रूप में व्यक्त हुआ है कि राजपुत्र मिट्टी के खिलौने की कामना करता है और गरीब दीना राजकुमार के पास होनेवाला सोने का खिलौना चाहता है। इस प्रकार दोनों ही अपनी अपनी कामनाओं के कारण असंतुष्ट हैं।

संक्षेप में, 'मृण्मयी' में संकलित कविताओं में दुःख सुख, लाभ-हानि, जीवन-मरण, लोभ एवं दान पुण्य आदि विषयों पर नूतन विचार प्रकट हुए हैं। कलापक्ष की दृष्टि से भी यह कृति महत्वपूर्ण है।

'बापू': [सन् १९३८]

सियारामशरणजीका 'बापू' काव्य भी एक लघुकाय गीतिकाव्य ही है। इसमें कवि ने गांधीवाद की काव्यात्मक झांकी प्रस्तुत की है। कविने बापू को विश्व को मानवता की दिशा में नया मोड़ देनेवाला तथा पथ निर्देशक के रूप में चित्रित किया है। कवि ने इसमें गांधीजी के अभयदान का

अनेक स्थलों पर यशोगान किया है तथा तत्कालीन भारतीय जनता की दीन-हीन अवस्था का भी चित्र प्रस्तुत किया है। इस काव्य में गांधीदर्शन का सैध्दांतिक चित्रण भी हुआ है। यहाँ कवि का देशप्रेम संकुचित न होकर अंतर्राष्ट्रीय रूप धारण करने के लिये व्यग्र दिखाई देता है।

प्रस्तुत कृति में नारी के प्रति सम्मान का भाव भी प्रकट हुआ है तथा "कवि ने बापू की विश्व बंधुत्व तथा मानवमात्र के कल्याण की कामना को व्यक्त किया है।"[१]

<u>उन्मुक्त</u> : [सन् १९४०]

सियारामशरणजी के प्रसिध्द एवं लोकप्रिय ग्रंथों में 'उन्मुक्त' की भी गणना की जाती है। यह एक सजीव गीतिनाट्य है जिसकी प्रेरणा कवि को गांधीजी के अहिंसावाद से मिली।

'उन्मुक्त' की कथा सोलह दृश्यों में वर्णित है, प्रथम सात दृश्यों में कथावस्तुका आरंभ और विकास है, आठ से तेरह दृश्यों तक उसका मध्यांश और संघर्ष है और अंतिम तीन दृश्यों में कथा की अंतिम परिणति दिखाई गई है। यद्यपि 'उन्मुक्त' का कथानक मुख्यत: कुसुमव्दीप से संबंधित है पर उसमें प्रसंगिक रूप से लौहव्दीप, ताम्रव्दीप और रौप्यव्दीप की भी चर्चा हुई है। इसमें कवि ने युध्द की पृष्ठभूमि में इस तथ्य को सिध्द करना चाहा है कि अहिंसा के मार्ग से ही शांति की स्थापना संभव हो सकती है। युध्द से क्षणिक शांति भले ही स्थापित हो जाय, किंतु व्देष प्रतिकार की भावना तथा पारस्परिक वैमनस्य की आग सदैव अविच्छिन्न रूप से सुलगती रहती है। अहिंसा में ही मनुष्य का कल्याण अंतर्निहित है तथा सच्ची विजय ह्रदय को जीतने में है न कि शरीर को।

कवि ने नैतिकता को मनुष्य की शक्ति बताते हुए यह भी प्रतिपादित करने की कोशिश की है कि मनुष्य की नैतिकता ही उसकी शक्ति

---

१. सियारामशरण गुप्त : व्यक्तित्व और कृतित्व : डॉ. शिवप्रसाद मिश्र पृ. ११८

है और नैतिकता का अध:पतन होने पर मनुष्य मनुष्यत्व की ऊँचाईयों से गिरकर पशुत्व की श्रेणी में पहुँच जाता है। कवि ने हेमा के प्रति किये गये अशिष्ट व्यवहारके संदर्भ में मानवता के पतन की भर्त्सना की है।

'उन्मुक्त' का सबसे मार्मिक स्थल है - सुश्रूषालय में गुणधर पर आहत सैनिक व्दारा प्रहार। गुणधर अहिंसा का पक्षपाती है। वह शत्रुपक्ष के आहत सैनिक को अपनी ही भाँति दुखी देखकर सहानुभूति प्रदर्शन के निमित्त उसके सन्निकट जाता है, किंतु सैनिक अवसर का लाभ उठाकर उसपर हिंसक प्रहार करता है। गुणधर सैनिक के इस कुकृत्य से दुखी होता है, किंतु वह उसके प्रति प्रतिहिंसात्मक रुख न अपनाते हुए उसे दया का पात्र समझता है। इस प्रकार 'उन्मुक्त' में जहाँ गांधीवादी वैचारिक पक्ष की स्पष्ट अभिव्यक्ति हुई है, वहीं सफल एवं प्रभावशाली भावाभिव्यक्ति की दृष्टि से भी यह एक सुंदर कृति है।

'दैनिकी': [सन् १९४२]

'दैनिकी' में कवि की इक्यावन स्फुट रचनाएँ संकलित हैं। चूँकि दैनिक समाचार पत्र ही उनके वैचारिक उद्रेक के कारण थे, इसीके आधारपर संभवत: कृति का नाम 'दैनिकी' रखा गया। 'यंत्रपुरी' नामक कविता में आज के विषाक्त जीवन का ही अंकन हुआ है। कवि ने इस तथ्य को भी हमारे सम्मुख उजागर करने का प्रयत्न किया है कि आज की वैज्ञानिक प्रगति मेंयदि एक ओर मनुष्य ने सुख के साधन एकत्र किये हैं तो दूसरी ओर विनाश के उपकरणों की सृष्टि भी कम नहीं हुई। 'परिवर्तित' नामक कविता में दो पैसे की मर्मस्पर्शी कथा अंकित है तथा प्रतिहिंसा एवं वैरभाव का व्यंग्यात्मक ढंग से चित्रण किया है। इसी प्रकार 'स्मरण' नामक कविता में कवि ने डाकुओं का अपनी शक्ति का दुरुपयोग करना, निर्धन भिखमंगों के गलितपात्र तथा फटे वस्त्र, महलों का धराशायी होना, निराश प्राणियों की मनोव्यथा युध्द की विनाश लीला और निर्धन प्राणियों पर अत्याचार आदि घटनाओं के ह्दयस्पर्शी चित्र अंकित किये हैं। 'उन्मुख' नामक कविता में कवि ने प्रतीकात्मक ढंग से पृथ्वी की महिमा का गुणगान किया है। इस कृति की अनेक रचनाएँ

सर्वहारा वर्ग से संबंधित हैं। 'बिरजू' नामक कविता में मजदूर की दयनीय स्थिति का करुण चित्र अंकित करते हुए कवि ने कहा है कि वह प्यासा होने पर भी चक्की पर काम करता है और मालिक के डर से तनिक भी आराम नहीं करता। 'सजग व्दन्व्द' नामक कविता में कवि ने जीवन की यथार्थता की ओर संकेत करते हुए रात्रि के एकांत में रोते हुए शिशु का यथार्थ भाव-चित्र अंकित किया है। इस प्रकार 'दैनिकी' में कवि ने नित्यप्रति घटित होनेवाली घटनाओं का ही चित्रांकन किया है।

नोआखली में :[सन १९४६]

प्रस्तुत काव्य संकलन में कवि की ग्यारह काव्य कृतियाँ संकलित है। आरंभ में 'अखण्डित' नामक कविता है, जिसमें कवि ने हिमालय और गंगा की अखण्डता पर पूर्ण विश्वास प्रकट करते हुए भारत की अखण्डता को प्रतिपादित किया है। 'मातृभूमि के प्रति' कविता में कवि ने भारत की विदग्ध अवस्था का चित्रांकन करते हुए हमें यह बताया है कि साम्प्रदायिक विव्देष से देश कलंकित होता है और भारत के संतानों की काली करतूतों के कारण उस भारत को अपना मस्तक झुकाने के लिये बाध्य होना पड़ा है, जो भारत कभी भी नतमस्तक नहीं हुआ था। 'ग्यारह दोहे' नामककविता में कवि ने 'ग्यारह' के प्रतीक से हिन्दू मुस्लिम अभेदता का मानवीय धरातल पर प्रतिपादन करते हुए यह स्पष्ट करना चाहा है कि जिस प्रकार एक और एक के सम्मिलन से ग्यारह होते हैं, उसी प्रकार संगठित हिन्दू और मुसलमान भारत के महान शक्तिपुंज बन सकते हैं। स्पष्टत: 'नोआखली में' हिन्दू मुस्लिम एकता का आग्रह ही प्रकट हुआ है। 'रमजानी' कविता में कवि ने मानव के पारस्परिक प्रेम, सौहार्द्र और स्नेह का वर्णन किया है। 'बिहार के प्रति' कविता में कवि ने इस तथ्य को हमारे सम्मुख उजागर करने का प्रयत्न किया है कि बैर की आग बैर से नहीं बुझती। उसे तो प्रेम से ही शांत किया जा सकता है। 'ध्वंस' कविता में साम्प्रदायिक उपद्रवियों व्दारा जलाये गये ध्वस्त मकानों का शब्दचित्र अंकित किया गया है। 'नोआखली में' कवि ने साम्प्रदायिक अग्नि के शिकार बने हुए जन जीवन का चित्रांकन करते हुए धर्मांध लोगों की भर्त्सना की है। 'निशांत' में कवि का राष्ट्रपिता गांधीजी के प्रति श्रध्दाभाव व्यक्त हुआ है। इस काव्य संकलन की अंतिम कृति

'एक हमारा देश है' जिसमें कवि ने स्वतंत्रता के अरुणोदय की ओर संकेत करते हुए अपना दृढ़ आत्मविश्वास प्रकट किया है। इस प्रकार सोद्देश्यता को लिये हुए प्रस्तुत काव्य कृति भी अपना विशिष्ट स्थान रखती है।

नकुल : [सन् १९४६]

'नकुल' सियारामशरणजी द्वारा रचित खण्डकाव्य है जिसकी कथा महाभारत के वन पर्व से ली गई है। किंतु कवि ने मूल वस्तु का स्वतंत्रतापूर्वक उपयोग करते हुए उसमें कुछ परिवर्तन भी किये हैं। 'नकुल' की कथा इस प्रकार है :

जिस वन में पाण्डव निवास करते थे उसीमें उनके समीप एक तपस्वी ब्राह्मण रहता था। उसकी अरणि पेड़ पर टँगी हुई थी। एक हिरण आया और वृक्ष से अपना सिर खुजाने लगा। इस संघर्षण में उसके सींगों में वह अरणि उलझ गयी। हिरण भागा तो अरणि के उलझने से उसे चोट लगी। तपस्वी ब्राहमण यज्ञ की अरणि चले जाने से व्यग्र होकर पाण्डवों की कुटी पर गया। कुटी में युधिष्ठिर अकेले थे, अन्य सभी भाई द्रौपदी के साथ 'अमृतह्रद' की शोभा देखने गये थे, क्योंकि आज उनके वनवास का अंतिम दिन था। यह सरोवर अमृताचल के ऊपर स्थित था। प्रात:काल द्रौपदी के स्नान करने जाते समय वज्रसेन ने बताया कि अमृतह्रद पर रहनेवाला एक दानव मनुष्य को कष्ट पहुँचाता है। पाण्डव सभी दानवोंका पहले ही विनाश कर चुके थे, अत: उन्हें यह देखने की जिज्ञासा हुई कि अब यह कौन दानव है जो लोगों को कष्ट दे रहा है। इसी जिज्ञासा से प्रेरित होकर वे अमृतह्रद की ओर चल पड़ते हैं। इधर युधिष्ठिर अरणि लाने के लिये हिरण के पीछे भागते हैं और पानी को खोजते हुए वे एक सरोवर की ओर जा निकलते हैं। वहाँ अलकापुरी से निर्वासित यक्ष [मणिभद्र] उन्हें सूचना देता है कि दुर्योधन के व्यक्तियों ने सरोवर को विषाक्त कर दिया है। वह यह भी बताता है कि वह हिरण आश्रम का ही है और अरणि तथा मथनिका सुरक्षित है। यक्ष स्वयं अरणि और मथनिका लेकर ब्राहमण के यहाँ जाता है,

जहाँ उसे ब्राहमण से ज्ञात होता है कि अभी वार्तालाप करनेवाले सज्जन युधिष्ठिर थे। यह जानकर कि चारों भाई द्रौपदी सहित अमृतह्रद सरोवर की शोभा देखने गये हैं, यक्ष शीघ्र सरोवर की ओर प्रयाण करता है। इधर चारों भाई सरोवर का विषाक्त जल पीकर मृतप्राय हो जमीन पर गिर पड़ते हैं। वे दोनों गण भी परस्पर युध्द करते हुए मर मिटते हैं जिनकी सहायता से दुर्योधन ने सरोवर के जल को विषाक्त करवाया था। इनके युध्द की ध्वनि सुनकर युधिष्ठिर अमृतह्रद की ओर आकर्षित होते हैं, और वहाँ वे अपने चारों भाइयों को मृतप्राय अवस्था में पाते हैं। उसी समय यक्ष वहाँ पहुँचता है। उसेक पास अमृत की एक बूँद होती है जो केवल एक को ही जीवित कर सकती है। यह पूछे जाने पर कि युधिष्ठिर पहले किसे जीवित देखना चाहते हैं, इस पर युधिष्ठिर नकुल को जीवित देखने की इच्छा व्यक्त करते हैं। तब यक्ष उनके उत्तर से संतुष्ट होता है और अमृत की उस अक्षय बूंद के व्दारा युधिष्ठिर के सभी भाइयों को जीवनदान प्रदान कर देता है।

<u>जयहिन्द</u> : [सन् १९४७]

'जयहिन्द' गुप्तजी की अत्यंत लघुकाय काव्यकृति है। इसमें कविने राष्ट्रीय भावना की सुंदर अभिव्यक्ति की है। कवि ने स्वाधीन भारत को उद्बोधित करते हुए अतीत गौरव, वर्तमान हर्ष और उल्लास तथा भावी आशा का प्रभावशाली काव्यात्मक वर्णन किया है। उन्होंने 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के भारतीय सिध्दांत की चर्चा करते हुए यह भी संकेत किया है कि यह नवोदित स्वतंत्र भारत कभी भी किसी राष्ट्र या जाति की प्रगति में बाधक नहीं होगा। वह सर्वजन हिताय एवं सवर्जन सुखाय का लक्ष्य ही अपनायेगा। भारत की धर्मनिरपेक्षता का चित्रण करते हुए कवि ने इस तथ्य को भी स्पष्ट करने का प्रयास किया है कि भारत के विशाल ह्रदय की छत्रछाया में समस्त धर्म एवं जाति के लोग संरक्षण पाते रहेंगे।

'कवि श्री' सियारामशरण गुप्त : [सन् १९५५]

'कवि श्री' का संपादन श्री अज्ञेयजी ने सन् १९५५ में किया था। जिसमें श्री सियारामशरणजी की छब्बीस कविताएँ संकलित हैं। इन छब्बीस कविताओं में से 'नवप्रभात' एवं 'बाबा' नामक दो कविताओं को छोड़कर शेष सभी कविताएँ अन्य पुस्तकों में प्रकाशित हो चुकी हैं, किंतु इस काव्य संकलन में पूर्व प्रकाशित रचनाओं को पुन: एक साथ संकलित कर संपादक ने सियारामशरणजी के काव्य विकास को बोधगम्य बनाने की दिशा में महत्त्वपूर्ण कार्य किया है।

अमृतपुत्र : [सन् १९५९]

प्रस्तुत काव्यकृति प्रभु ईसा के जीवन से संबंधित है। प्रारंभ में लगभग सात पृष्ठों में प्रभु ईसा का जीवनवृत्त संक्षेप में अंकित किया गया है। 'सामरी' शीर्षक कविता सामरा प्रांत से संबंधित है। दूसरी कविता 'क्रूसधर' सायमन नाम के एक व्यक्ति की स्वात्म कथा है। वह तीर्थयात्रा पर आया हुआ था। उसी मार्ग से क्रूस ढोते हुए ईसु को क्रूस पर चढ़ा देने के लिये प्रहरी ले जा रहे थे, प्रहरियोंने सोचा ईसु इस बोझ से कहीं मार्ग में ही गत न हो जाय। इसलिये सायमन को बेगार में पकड़ा गया और उसे क्रूस ढोकर ले जाना पड़ा। उसके जीवन में ईसु पहले किस प्रकार आये और अंत में उसने क्रूसारोहण होते किस प्रकार देखा यह सब उसके मुँह से वर्णित है। 'अमृतपुत्र' में ईसा का करुणा दर्शन भी अंकित हुआ है। अनेक प्रकार से आहत होनेपर भी ईसा के मुखमंडल पर असीम तेज तथा आततायियों के प्रति क्षमा भावना उनके विराट् जीवन दर्शन का द्योतक है। कवि ने उनके अहिंसात्मक स्वरूप का चित्रण भी किया है।

गोपिका : [सन् १९६३]

'गोपिका' का प्रकाशन गुप्तजी के महाप्रयाण के पश्चात् सन् १९६३ में हुआ। प्रस्तुत कृति काव्य नाटक के रूप में है, जिसमें श्रीकृष्ण के व्रज से प्रस्थान करने और पुन: लौटने तक की अवधि का वर्णन है। संपूर्ण काव्यकृति

सत्रह खण्डों में विभक्त है। काव्य के प्रारंभ में इन्दुमती का कृष्ण के दर्शनार्थ वृंदवाटिका में भ्रमण करना वर्णित है। अपने अनुज से यह ज्ञात होने पर कि कुछ समय पूर्व कृष्ण यहाँ आये थे, वह कृष्ण को खोजते खोजते वहाँ पहुँच जाती है, जहाँ कृष्ण बहुधा गाय चराने जाते थे। वहाँ दोनोंका प्रेम मिलन होता है और वे व्रज में विहार करते हैं। बाद में कृष्ण व्रज से प्रस्थान करते हैं और इन्दुमती को पूर्व स्मृतियाँ बेचैन करती है। वह ध्यानावस्थित हो जाती है और शेष की शैय्या पर लेटे हुए विष्णु भगवान के साथ लक्ष्मी का कथोपकथन सुनती है। भगवान कहते हैं एकबार अपनी रक्षा के लिये तुमने मुझे रुक्मिणी के मुँह से पुकारा था। वैसे ही तुम्हारी पुकार इस समय मैं फिर सुन रहा हूँ। यह इन्दुमती की पुकार थी। रुक्मिणी के जेष्ठभ्राता रुक्मी का सहाध्यायी दुर्जय रुक्मिणी से विवाह का इच्छुक होता है। किंतु यह संभव नहीं हो सकता। तब से वह रुक्मिणी को प्राप्त करने के लिये निरंतर प्रयत्नशील रहता है। वह संयोगवश वृंदवाटिका में जा पहुँचता है और उसे यह अनुभूति होती है कि इन्दुमती रुक्मिणी ही है। वन में भटककर गर्मी के कारण दुर्जय मूर्छित हो जाता है। वह उपचार के दौरान भद्र को बताता है कि वह इस प्रांत में वैसी ही राजधानी बनवायेगा जैसी सागर के बीच कृष्ण ने व्दारावती बसाई है। इधर इन्दु की सखी रुचिरा इन्दु के लिये चिंतित होकर मंजुला के घर जाती है। उसे व्रज में आनेवाले संकट का आभास मिल जाता है। व्रज पर दस्युओं का आतंक छाया हुआ है। इसी बीच मंजु नामक गोपी पता नहीं कहाँ चली जाती है। दुर्जय शूर नाम के गोप की सहायता से दस्युओं का एक दल एकत्र करता है। शूर को एक बार उसके पिता ने क्रूर कहकर पुकारा था। तब से वह क्रूर नाम से ही प्रसिध्द हो जाता है। एक दिन जब दुर्जय क्रूर के यहाँ से लौट रहा था, उसे मार्ग में पता चला कि कुछ लोग एक नारी को लूटने का प्रयास कर रहे हैं। यह नारी निम्बा नाम की नर्तकी थी।

इधर आमोद नाम के व्यक्ति ने नवगोपों का संगठन किया है। आमोद के साथ रुचिरा नाम की एक गोपी भी है। एक हंस समाचार देता है कि उस नारी को सतानेवाले नवगोप ही हैं। रुचिरा कृष्ण का ध्यान करती है। वन के कुएँ की जगत पर संध्या समय भद्र सखा की भेट एक यात्रीसे

होती है। यह यात्री व्दारावती से कोई संदेश लेकर युधिष्ठिर के यहाँ जा रहा था। भद्र को वही यात्री बताता है कि रुक्मिणी ने मथुरा निवास में एक इन्दीवर सरसी बनवाकर उसका नाम 'इन्दुमती' रखा है। मंजुला के व्दारावती जाने का समाचार भी उसी यात्री से मिलता है। आमोद स्वयं वृंदवाटिका की रक्षा करने की बात सोचता है। नवगोप भद्र सखा को वृंदवाटिका में प्रवेश नहीं करने देते। प्रवाद है कि वे निम्बा के मोह में पड़ गये हैं।

कुरुक्षेत्र के यात्रापर्व के समीप निम्बा भद्र से मिलती है, एक बार कृष्ण निम्बा की छोटी झोपड़ी में छिप गये थे। वहाँ से एक ही दिन के पश्चात् वे मथुरा चले गये थे। तभी से इन्दु को उस कुटिया का मोह हो गया था। निम्बा फिर श्याम से नहीं मिल पाती। निम्बा और क्रूर के प्रणय संबंध का पता प्राय: सभी लोगों को था। आमोद को कहीं से पता चल पाता है कि भद्रसखा निम्बा के साथ प्रणय बंधन में बँध गए हैं तथा गोकुल के शत्रुओं का साथ देने जा रहे हैं। आमोद इन्दु और माधव के संबंध की चर्चा भी इधर उधर से सुनता है।

मंजुला पुरुष वेश में व्दारावती जा पहुँचती है। रुक्मिणी उसका आदर सत्कार करती है। व्दारिका में उसकी भेंट कृष्ण से भी होती है, किंतु दस्युओं से व्रज की रक्षा के लिये वह उनसे याचना नहीं करती।

दुर्जय एक नवीन स्नातक को नवगोपों की खबर लाने का चर बनाता है। भद्र निम्बा के साथ क्रूर के पिता धीर के यहाँ पहुँचता है। धीर उसका पुराना मित्र है। शूर की पत्नी स्वस्ति सपत्नी समझकर भी निम्बा का स्वागत करती है।

एक अँधेरी रात में इन्दु पिछली बातें याद करती है। इससे पूर्व मंजुला ने उसे व्दारावती के समाचार से अवगत करा दिया था। इन्दु अपने मनमें सोचती है -मंजुला नंदन कानन वाले पारिजात के नीचे बैठ आई है। व्रज को इस प्रकार का पारिजात नहीं चाहिए। इन्दु यह भी सोचती है कि एक अँधेरी रात में कृष्ण उसे गोवर्धन गिरि की सबसे ऊँची चोटी पर

ले गये थे, जिस पर दिन के उजाले में भी चढ़ना कठिन है।

दूसरे दिन प्रातःकाल भद्रसखा लौटकर बताते हैं कि मंजुला ने अपने आज न आ सकने का समाचार भेजा है। पारिजात प्रसंग में उसने सुना था कि सत्यभामा ने कृष्ण के साथ पारिजात भी देवर्षि को अर्पित कर दिया था। उसीसे प्रेरणा पाकर मंजुला और निम्बा ने भी अपना सर्वस्व कृष्णार्पण करके उन्हें अपना ही नहीं, समस्त संसार का बना लिया है।

स्नातक बंधु के आनेपर भद्र उसे इस तथ्य से अवगत कराता है कि दस्युओं ने धीर को कैसी यातनाएँ दी है और स्वस्ति का कहीं पता नहीं। इन्दु क्रोधित होकर भद्र को अपनी वृंदवाटिका के साथ केशव को भी समर्पित कर स्वस्ति को खोजने निकल पड़ती है।

हंस बताता है कि इन्दु के चले जाने से सर्वत्र सूनापन छाया है। आमोद तभी से एक स्थान पर कुछ खोया हुआ अचल होकर बैठा है। क्रूर विक्षिप्त सा भ्रमण कर रहा है। उसे ऐसा प्रतीत होता है कि उसके एक हाथ से आग की लपटे निकल रही हों। इस प्रकार उसे वातावरण भयावह लग रहा है।

एक दिन अचानक व्रज में आनंद छा जाता है। व्रज नारियाँ निर्भय होकर विचरण करने लगती हैं। लगता है कृष्ण ने व्रज में प्रवेश किया है।

इस बात का पता चलने पर भी कि कृष्ण वृंदवाटिका में पधार रहे हैं आमोद निरुत्साही होकर बैठा रहता हैं, वह तो इन्दु जीजी के लिये चिंतित है। आवेश में वह यहाँ तक बोल पड़ता है –"मैं उनकी प्रजा नहीं हूँ, क्यों मैं उनके लिये उठूँ।" वृंदवाटिका में श्री कृष्ण का पदार्पण होता है। गौरीपूजन के हेतु वे सरसी के इंदीवर लेने जाते हैं। आमोद को एक विराट् अनुभूति होती है और श्री कृष्ण के सम्मुख वह नतमस्तक हो जाता है। कृष्ण उसे आशीर्वाद देते हैं। यहीं कथा समाप्त हो जाती है।

सुनंदा : [सन् १९६८]

'सुनंदा' का प्रकाशन उसके रचनाकाल के बारह वर्ष पश्चात् सन् १९६८ में हुआ। 'सुनंदा' भी खण्डकाव्य है, जिसमें नक्षत्र नगर के राजकुमार तथा उनके मित्र रंजन की सुनंदा एवं चम्पा के लिये प्रेम यात्रा का वर्णन है। चूंकि राजकुमार अमल वंश का है; अत: ऐसी सावधानी बरती जाती है कि उसे धूलि का एक कण भी स्पर्श न कर सके। अमल कन्याएँ उसका मन आंदोलित नहीं कर पातीं। अतएव धरती की सुनंदा के आकर्षण में राजकुमार अपनी नगरी का त्याग करता है। यहीं से काव्य का आरंभ होता है। सुनंदा इस अरण्य के उस पार मकर मालिनी के तट पर बने हुए लौह दुर्ग में बन्दिनी है। यह दुर्ग रंजन व्दारा भस्म हो जाता है, किंतु सुनंदा राजकुमार से नहीं मिलती। वह तो राजकुमार से यही कहती है :

"खर्व नहीं हम, खर्व नहीं तुम, आओ प्रियतम आओ
ऊँचा स्थान तुम्हारा वह जो, हमें वहीं तुम पाओ।"

सुनंदा के उक्त उद्‌गारों के साथ कवि ने काव्य की परिसमाप्ति की है।

[आ] अनूदित कृतियाँ :

गुप्तजी ने अठारह काव्यकृतियों के अतिरिक्त तीन अनूदित कृतियाँ भी प्रस्तुत की हैं, जिनके नाम क्रमश: 'गीतासंवाद,' 'हमारी प्रार्थना' और 'बुध्दवचन' हैं।

गीता संवाद: [सन् १९४८]

'गीता संवाद' में गीता का समश्लोकी पद्यात्मक अनुवाद हुआ है। 'गीतासंवाद' के आरंभ में सियारामशरणजी का निवेदन और आचार्य विनोबा भावे व्दारा लिखित भूमिका है। आचार्य विनोबा व्दारा मराठी में अनूदित 'गीताई' के आधारपर ही गीता संवाद को प्रस्तुत किया गया है।

Smt. HANSA MEHTA LIBRARY • THE M.S. UNIVERSITY OF BARODA

हमारी प्रार्थना : [सन् १९५२]

यह आचार्य विनोबा के 'प्रात:कालीन प्रार्थना' [मराठी, गद्य] का हिन्दी रूपांतर है। इस कृति का हिन्दी अनुवाद कवि ने विनोबाजी की प्रेरणा पर किया है। यह सोलह पृष्ठों की लघुकाय कृति है जिसमें सायंकाल की प्रार्थना में 'स्थितप्रज्ञ-लक्षण', 'सर्वधर्म स्मरण,' 'नामधुन' तथा एकादशव्रत सम्मिलित हैं। प्रात:काल की प्रार्थना में 'ईशावास्य,' 'सर्वधर्म स्मरण,' 'नामधुन' तथा एकादश व्रत का समावेश हुआ है। 'हमारी प्रार्थना' में कवि ने विनोबाजी के 'सर्वधर्म समभाव' की उच्च एवं व्यापक धर्मभावना को ही अभिव्यक्ति प्रदान की है।

बुध्दवचन : [सन् १९५६]

प्रस्तुत कृति में पालि के 'धम्मपद' का अनुवाद किया गया है। इसमें चार सौ तेईस गाथाएँ हैं और उनके साथ एक एक संक्षिप्त कथा जुड़ी है। इन कथाओं का महत्व इसी रूप में है कि शताब्दियों के बाद भी वे जीवन की शाश्वत समस्याओं का समाधान करने में समर्थ हैं। चूंकि वे जीवन और जगत् से संपृक्त हैं अत: अधिक सप्राण भी प्रतीत होती हैं। 'बुध्द वचन' में कवि का प्राचीन संस्कृति के प्रति प्रेम ही प्रकट हुआ है।

उपसंहार :

संक्षेप में कहा जा सकता है कि कवि के रूप में सियारामशरणजी का विशिष्ट स्थान है। उनकी रचनाओं में उनके व्यक्तित्व की सरलता, विनयशीलता, सात्त्विकता एवं करुणा सर्वत्र प्रतिफलित होती है। "उनकी रचनाएँ सर्वत्र एक प्रकार के चिंतन, आस्था, विश्वासों से भरी हैं, जो उनकी अपनी साधना और गांधीजी के साध्य साधन की पवित्रता की गूँज से अभिमण्डित है।"[१] गांधीवाद से प्रभावित होने के कारण उनकी रचनाओं में हिंसा, ईर्ष्या, व्देष, स्वार्थ, मोह, क्रोध, अहंकार आदि असात्त्विक गुणों के प्रति उपेक्षा भाव प्रकट हुआ है तथा सत्य, अहिंसा, प्रेम, करुणा, दया, क्षमा आत्मपीड़ा आदि सात्त्विक भावों का परिपाक हुआ है।

---

१. हिन्दी साहित्य कोष : भाग-२ - सं. धीरेन्द्र वर्मा एवं अन्य - पृ. ५९३.